B.A. III (Hons) VII paper

Ancient History
Sub- भारतीय दर्शन
शेरशाह कॉलेज सासाराम -

page-1

उपनिषद् दर्शन (Upanishad Philosophy)

'उपनिषद्' शब्द 'उप' और 'नि' उपसर्गपूर्वक 'सद्' धातु से निष्पन्न होता है। 'सद्' धातु के चार अर्थ होते हैं — बैठना, नाश करना (विशरण), प्राप्त करना (गति) और शिथिल करना (अवसादन)। 'उप' का अर्थ है समीप और 'नि' का अर्थ है ध्यानपूर्वक। अतः उपनिषद् शब्द का अर्थ हुआ — शिष्य का गुरु के समीप ध्यानपूर्वक परम तत्त्व का गूढ़ उपदेश सुनने के लिए बैठना, जिससे शिष्य की अविद्या का नाश होता है उसे ब्रह्म-प्राप्ति होती है। तथा उसके कर्म-बन्धन एवं तज्जन्य दुःखादि का शिथिलीकरण होकर अन्त हो जाता है। इस प्रकार उपनिषद् शब्द अध्यात्मविद्या या ब्रह्मविद्या के अर्थ में प्रयुक्त होने लगा और क्योंकि यह विद्या गुरु द्वारा अधिकारी शिष्य को एकान्त में दी जाती थी, अतः यह रहस्यविद्या या गुह्यविद्या भी कहलाई। उपनिषद् शब्द मुख्य रूप से ब्रह्मविद्या का वाचक है तथा गौण रूप से ब्रह्मविद्याप्रतिपादक ग्रन्थों के लिए प्रयुक्त होता है। इन उपनिषद् ग्रन्थों को ही वेदान्त कहा जाता है क्योंकि ये वेद के अन्तिम भाग हैं तथा वैदिक दर्शन के सारभूत सुनिश्चित सिद्धान्तों के प्रतिपादक हैं। मुक्तिकोपनिषद् के अनुसार उपनिषदों की संख्या 108 है, किन्तु प्रामाणिक तथा महत्त्वपूर्ण उपनिषद् ग्यारह हैं जिन पर शंकराचार्य के भाष्य उपलब्ध हैं। ये हैं ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य, तैत्तिरीय, ऐतरेय, छान्दोग्य, बृहदारण्यक और श्वेताश्वतर। कुछ उपनिषद् गद्य में हैं, कुछ पद्य में और कुछ गद्य-पद्य में। छान्दोग्य, बृहदारण्यक सर्वाधिक प्राचीन माने जाते हैं। उपनिषद् भारतीय दर्शन की निधि हैं और उसके मूल स्रोत भी हैं। शोपेनहावर, मैक्समूलर, डॉयसन आदि अनेक पाश्चात्य विद्वानों ने भी इनकी प्रशंसा की है।

उपनिषद् में अद्वैत, विशिष्टाद्वैत एवं द्वैतपरक वाक्य उपलब्ध हैं किन्तु उनका तात्पर्य अद्वैत के प्रतिपादन में ही है क्योंकि बाहुल्य अद्वैत श्रुतियों का है और उन्हीं को बार-बार प्रतिपादित किया गया है। फिर, विशिष्टाद्वैत एवं द्वैतपरक वाक्यों को गौण मानकर उनकी संगति अद्वैत श्रुतियों के साथ हो जाती है, किन्तु अद्वैत संगति द्वैत

Scanned with CamScanner

द्वैताद्वैत, विशिष्टाद्वैत के साथ किसी भी प्रकार से नहीं हो सकती। श्रीशंकराचार्य ने इसका स्पष्ट, विशद और विस्तृत प्रतिपादन किया है।

उपनिषद को भारतीय दर्शनों का मूल स्रोत माना जाता है। भारतीय दर्शनों की कोई ऐसी प्रमुख विचारधारा नहीं है जिसका उद्गम उपनिषद में न हो। वेदान्त की प्रस्थान-त्रयी में उपनिषद मूलप्रस्थान है। ब्रह्मसूत्र उपनिषद- वाक्यों का सूत्ररूप में संकलन है। गीता को उपनिषद- गायों का अमृत रूपी दूध माना गया है। जिसे गोपालकृष्ण ने अर्जुन को बछड़ा बना कर विद्वानों के पानार्थ दुहा है। जैन दर्शन ने भी कर्मवाद और आत्मतत्व के व्याख्यान में उपनिषद से बहुत कुछ लिया है। तथा बौद्ध दर्शन अपने विज्ञानवाद, अद्वैतवाद, अनित्यवाद, कर्मवाद, अविद्या, चतुष्कोटि, निर्वाण आदि सिद्धान्तों के लिए उपनिषद का अत्यन्त ऋणी है। सांख्य की प्रकृति, त्रिगुण, पुरुष, बुद्धि, अहंकार, मन, सूक्ष्म शरीर आदि के बीज और अंकुर कठ और श्वेताश्वर आदि में उपलब्ध हैं। योग की जड़ें श्वेताश्वर और कठ आदि में मिलती हैं। अद्वैत वेदान्त में ज्ञान का प्राधान्य है।

उपनिषदों में ज्ञान का प्राधान्य है, कर्म और उपासना गौण हैं। कर्म और उपासना चित्तशुद्धि और चित्त की एकाग्रता के लिए आवश्यक है क्योंकि शुद्ध और एकाग्र चित्त में ही आत्म तत्व का दिव्य प्रकाश, ज्ञान सविता का 'वरेण्य भर्ग' तथा शिव-स्वरूप ज्योतिषां ज्योति, प्रकट हो सकती है। नारद सनत्कुमार से इस प्रकार निवेदन करते हैं → भगवन! मैंने ऋग्वेद का, यजुर्वेद का, सामवेद, अथर्ववेद का, इतिहास पुराणरूपी 'पञ्चमवेद' का अध्ययन किया है और भी अनेक विद्याओं का मैंने अध्ययन किया है किन्तु मैं मन्त्रों को ही जानता हूँ, आत्मा को नहीं जानता। मैंने आप जैसे महात्माओं से सुना है कि जो आत्मा का साक्षात्कार करता है। वही शोक के पार जाता है। मैं शोक मग्न हूँ। भगवन! मुझे शोक के उस पार तार दीजिए। मुण्डक की उक्ति है- विद्या दो प्रकार की है अपरा और परा। ऋग्वेद यजुर्वेद, सामवेद अथर्ववेद, शिक्षा, कल्प, व्याकरण आदि अपरा विद्या के अन्तर्गत हैं। परा विद्या वह है जिससे अक्षर ब्रह्म की प्राप्ति होती

Scanned with CamScanner

Page 3

है। गीता का वचन है— वेदों के कर्मकाण्ड में आसक्त सकाम पुरुष स्वर्गसुख को परम श्रेष्ठ मानते हैं तथा भोग और ऐश्वर्य में लिप्त रहते हैं, अतः उनकी बुद्धि निश्चयात्मक नहीं होती और न उनकी प्रवृत्ति निष्काम की ओर होती है। वेदों का कर्मकाण्ड त्रिगुणात्मक प्रकृतिजन्य संसार को ही विषय बनाता है वह निस्त्रैगुण्य नित्य आत्मतत्व को प्रकाशित नहीं करता। जैसे परिपूर्ण विशाल जलाशय के प्राप्त होने पर जल के लिए छोटे जलाशयों की आवश्यकता नहीं रहती उसी प्रकार ब्रह्मज्ञान हो जाने पर वेदों के कर्मकाण्ड की आवश्यकता नहीं रहती। छान्दोग्य में तो कर्मकाण्ड के दुरुपयोग करने वाले खाने-पीने में ही आसक्त ऋत्विजों पर बड़ा तीखा व्यंग्य किया गया है जहाँ एक यज्ञ में कुत्तों को ऋत्विजों के समान चलते हुए और 'ओम हम खाते हैं, ओम हम पीते हैं, इस प्रकार गाते हुए दिखाया गया है। उपनिषद में वैदिक कर्मकाण्ड को गौण माना है; निरर्थक नहीं। कर्म से ब्रह्मप्राप्ति सम्भव नहीं है। कर्म और उपासना चित्त-शुद्धि तथा चित्त-एकाग्रता के लिए आवश्यक है; किन्तु ब्रह्म प्राप्ति के साधन नहीं है।

उपनिषद में आत्मा के स्वरूप का विवेचन विशद रूप में मिलता है। छान्दोग्य-उपनिषद में एक रोचक आख्यान आया है, जिसमें प्रजापति और इन्द्र के सम्वाद द्वारा आत्म चैतन्य के विविध स्तरों का विवेचन उपलब्ध है। माण्डूक्य उपनिषद में भी आत्मा को तुरीय या शुद्ध चैतन्य बताया गया है तथा जाग्रत, स्वप्न और सुषुप्ति उसकी अभिव्यक्ति की व्यावहारिक अवस्थायें हैं। कठ-उपनिषद में एक रमणीय रूपक द्वारा आत्मा का वर्णन किया गया है— यह शरीर रथ है जिसमें इन्द्रियरूपी घोड़े जुते हैं जो विषयरूपी मार्गों पर दौड़ा करते हैं। बुद्धिरूपी सारथि मनरूपी लगाम से इन घोड़ों को हांक रहा है; आत्मा-मन-इन्द्रिय से युक्त जीव इस रथयात्रा का भोक्ता है और आत्मा रथी अर्थात रथ का स्वामी है।

उपनिषद-दर्शन में ब्रह्म का आत्मा से तादात्म्य बताया गया है दोनों सर्वथा

Scanned with CamScanner

एक ही है। इसके अतिरिक्त ब्रह्म के विविध रूपों का विशद विवेचन मिलता है। आत्मा और ब्रह्म का तादात्म्य उपनिषद के ऋषियों की दर्शन को महान देन है। उपनिषद में ब्रह्म का वर्णन दो रूपों में मिलता है। ब्रह्म के विषय में सविशेष श्रुतियाँ और निर्विशेष श्रुतियाँ दोनों उपलब्ध हैं। ब्रह्म को सविशेष, सगुण भी कहा गया है और निर्विशेष, निर्गुण भी। सगुण ब्रह्म को 'अपर' ब्रह्म और निर्गुण ब्रह्म को 'पर' ब्रह्म गया है। अपर ब्रह्म की संज्ञा ईश्वर से भी है जो समस्त विश्व के कर्ता, धर्ता, हर्ता और नियन्ता हैं।

Dr. Birendra Prasad Singh
(Associate Professor)
Deptt of AI & AS
Shershah College Sasaram